इकाई 28 सांस्कृतिक आंदोलन

इकाई की रूपरेखा

28.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- चीन पर कन्फ्यूशियसवादी दर्शन के प्रभाव का जिक्र कर सकेंगे,
- 1911 के बाद "नयी संस्कृति" के आगमन के कारणों का उल्लेख कर सकेंगे,
- नये सांस्कृतिक आंदोलन के तत्वों का मूल्यांकन कर सकेंगे, और
- चीनी सांस्कृतिक क्रांति के बुद्धिजीवियों की भूमिका को आँक सकेंगे।

28.1 प्रस्तावना

इकाई 4 (खंड 1) में हमने कन्फ्यूशियस और उसके सिद्धांतों की चर्चा की थी। इस सिलसिले में हमने क्लासिकल और मध्ययुगीन चीन पर कन्फ्यूशियाई दर्शन के प्रभाव का भी जिक्र किया था। कन्फ्यूशियस के दर्शन से चीन वासी 2000 वर्षों से अधिक से परिचित थे और उसे व्यवहृत कर रहे थे। पर कुछ कारणों से ऐसे नये विचार सामने आये, जिनके कारण चीनी समाज पर कन्फ्यूशियाई दर्शन की न केवल पकड़ ढ़ीली हुई, बल्कि उन्होंने इस दर्शन के मूल आधार पर ही आघात किए। चीन का साम्राज्यवादी शोषण, आधुनिकीकरण की जरूरत और राजनीतिक सुधारों की आवश्यकता ने इस प्रकार के विचारों के उदय के लिए आधार भूमि प्रदान की। आरंभ में कन्फ्यूशियाई दर्शन के घेरे में रहकर ही सुधार की कोशिश की गयी; केवल ताइपिंग विद्रोह में इसे चुनौती दी गयी और इसका खुला उल्लंघन किया गया। इन सभी बिंदुओं पर पिछली इकाइयों में विचार किया जा चुका है।

इस इकाई में हम 1911 की क्रांति के तुरंत बाद चीन में पनपने वाली नयी संस्कृति के उदय पर विचार-विमर्श करेंगे। 19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में इस नयी संस्कृति की नींव रखी जा चुकी थी। इस इकाई में बुद्धिजीवियों, छात्रों, विश्वविद्यालय व्यवस्था आदि की भूमिका पर भी प्रकाश डाला जाएगा।

28.2 नया दौर

किसी साम्राज्य का अंत फिर विद्रोह और अव्यवस्था आदि बातें चीनीवासियों के लिए नयी न थीं। उनके पूर्वजों ने समय-समय पर अव्यवस्था के कई दौर देखे थे। पर उन्होंने न केवल

इस अवस्था भरे माहौल पर विजय हालिस की, बल्कि कभी-कभी उन्नति की ओर भी अग्रसर हुए। चीनवासियों के लिए साम्राज्यों की उलट-पुलट इतिहास की एक आम बात थी। पर 1911 में चिंग साम्राज्य का पतन अपने आप में भिन्न था। इसके बाद बादशाहियत खत्म हो गई। चीनवासियों के अनुसार राजा "स्वर्ग पत्र" के रूप में सर्वोच्च शासक होता था और स्वर्ग का आशीर्वाद बने रहने तक उसकी सत्ता अक्षुण्ण बनी रहती थी। जब स्वर्ग की नजरें किसी राजा और साम्राज्य से कुपित हो जाती थीं, फिर नया राजा और साम्राज्य उसकी जगह ले लेता था। राजशाही के अंत के बाद चीन की अन्य संस्थाएँ भी बिखरी। परिवार, कुल, वंश, श्रेणी, गाँव आदि कुछ ऐसी संस्थाएँ उस समय विराजमान थीं, जिनके कारण समाज स्वनिर्भर और स्वनियंत्रित इकाई था। राजशाही के अंत के बाद सारी संस्थाएँ चरमराने लगीं। नारी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष, कल-कारखानों और शहरों का उदय, व्यापारिक प्रतिष्ठानों में नयी शिक्षा व्यवस्था के उदय से एक ओर परंपरागत चीनी समाज टूटने लगा और दूसरी तरफ आधुनिक युग का आगमन हुआ। सत्ता सैनिकों ने हथिया ली थी, अतः राजनीतिक क्षेत्र में प्रजातांत्रिक शासन की नयी अवधारणा को पनपने का मौका नहीं मिला, पर संस्कृति आंदोलन अपनी गति पर था। चीन में बदलाव और विकास का जोर इतना ज्यादा था कि सांस्कृतिक बदलाव अवश्यंभावी हो गया। इस बदलाव और विकास का प्रभाव कहीं न कहीं तो पड़ना ही था। हाँ, राजनीति और अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में न पड़ कर यह प्रभाव संस्कृति के क्षेत्र में पड़ा। इस सांस्कृतिक क्रांति की मुख्य विशिष्टता यह थी कि इसने कन्फ्यूशियसवाद को चुनौती दी। कन्फ्यूशियस के दर्शन का चीनवासियों के जीवन पर गहरा प्रभाव था और वे 2000 वर्षों से इसका पालन करते आ रहे थे। एक बार समाज के मूलाधार दर्शन पर चोट हुई कि सारी ऊपरी संरचनाएँ भरभराकर ढहने लगीं।

राजशाही वंश आधारित बादशाहत समाप्त होने के बाद भी कन्फ्यूशियसवाद सुरक्षित और अक्षुण्ण रहा। यह ध्यान रखना चाहिए कि राजतंत्र कन्फ्यूसियस के दर्शन से भी पुराना था। कन्फ्यूशियस के बनाए नियम और चलन अभी भी समाज में विद्यमान थे। इन नियमों और परंपराओं के माध्यम से समाज में "सौहार्द" कायम किया गया था, समाज में कई स्तर थे कुछ निचले तबके के लोग थे, कुछ ऊँचे तबके के लोग। निचले तबके के लोगों की स्थिति श्रेष्ठ थी। इस प्रकार की व्यवस्था और विचार से आगे के विकास का मार्ग अवरुद्ध होता था। उन्नीसवीं शताब्दी के मांचू दरबार के सुधारवादी लोगों और बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों के सुधारकों ने कन्फ्यूशियस के बनाए गये ढाँचे के अंदर रहकर ही चीन को बदलने की कोशिश की। इस कारण से चीनी समाज पर इन बदलावों का जमकर प्रभाव नहीं पड़ सका। ये बदलाव ज्यादातर दिखावटी थे। वस्तुतः कन्फ्यूशियाई रूढ़िवादिता को चुनौती दिए बिना क्रांतिकारी बदलाव संभव नहीं था।

28.3 कन्फ्यूशियसवाद और परंपरागत चीनी समाज

कन्फ्यूशियस दर्शन से चीन के जीवन का प्रत्येक अंश प्रभावित था और तथाकथित आधुनिक युग भी इससे अछूता न था। कन्फ्यूशियस के विचारों और विश्वासों पर हम पहले ही (इकाई 4) में बातचीत कर चुके हैं। यहाँ हम एक बार फिर उनका उल्लेख करेंगे। पर यहाँ संदर्भ अलग होगा। यहाँ हम उन कारणों के संदर्भ में इन सिद्धांतों का उल्लेख करेंगे, जिसके कारण इन्हें नकारा गया और नयी संस्कृति का जन्म हुआ।

कन्फ्यूशियाई दर्शन में युवा की अपेक्षा बुजुर्ग को, वर्तमान की अपेक्षा भूत को, शासित की अपेक्षा शासक को, व्यक्ति की अपेक्षा समाज को तरजीह देने की प्रथा थी। इस स्तरीकरण के आधार पर सामाजिक सौहार्द और व्यवस्था को कायम किया जा सकता था। अगर एक बार यह क्रम टूटा हो समाज का सौहार्द नष्ट हो जाएगा, समाज बिखर जाएगा, व्यवस्था और स्थायित्व का स्थान अव्यवस्था ले लेगी और समाज का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा। अतः कन्फ्यूशियसवाद यथास्थिति बनाए रखने का समर्थक और किसी भी प्रकार के बदलाव का विरोधी था। वस्तुतः यह एक अनुचित और कट्टरपंथी दर्शन था। इस दर्शन को कभी भी धर्म के रूप में नहीं देखा गया पर इसके कुछ तत्व धार्मिक नियमों से भी अधिक कट्टर थे। यह धर्म नहीं था, अतः यह बौद्ध, इसाई और चीन के किसी भी लोक धर्म के साथ जी सकता था।

राजनीति और सरकार में कन्फ्यूशियसवाद ने "नैतिक शासक" के विचार को प्रतिपादित किया। अगर शासक खुद नैतिक सिद्धांतों का पालन नहीं करेगा, तो वह अपनी प्रजा को

कैसे संभाल सकेगा? राजनीतिक व्यवस्था का संबंध अलौकिक दुनिया से जुड़ा हुआ था और राजा "स्वर्ग पुत्र" था, अतः राजा को नैतिक और पवित्र होना था। राजा की आज्ञा मानना प्रजा का कर्तव्य था, राजा अपनी प्रजा पर शासन करने के लिए जन्मा है और यह उसका नैतिक अधिकार था।

कन्फ्यूशियाई सोच के अनुसार स्त्री पूर्णतः पुरुष को समर्पित थी और युवा बुजुर्गों के प्रति नतमस्तक थे। आयु और लिंग पर आधारित यह भेदभाव समाज में इस प्रकार घुलमिल गया था, कि कोई इसके बारे में सोचता तक नहीं था। समाज में स्त्री की कोई भूमिका नहीं थी, घर में वह माँ और पत्नी मात्र थी। बच्चा जनना और उसका पालन करना उसका सामाजिक कर्तव्य था। चीनी नारियों का सदियों से शोषण और दमन होता आ रहा था, उन्हें शिक्षा प्राप्ति का अधिकार नहीं था, वे सम्पत्ति की अधिकारिणी नहीं हो सकती थीं, किसी भी चीज पर उनका अधिकार नहीं था। यहाँ तक कि दक्षिणी चीन की स्त्रियों की स्थिति भी संकीर्णवादी उत्तरी चीन की स्थितियों से बहुत बेहतर न थी जबकि दक्षिणी चीन की स्त्रियाँ कृषि कार्य में पूरा हाथ बँटाती थीं। इसके अतिरिक्त अनेक ऐसी सामाजिक कुप्रथाएँ भी प्रचलित थीं, जिनके कारण स्त्रियों का जीवन नारकीय हो गया था, जैसे पैर छेदने की प्रथा, दुल्हन को बेचा जाना और बाल विवाह।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया युवा भी शोषित के दर्जे में आते थे। यह व्यवस्था बुजुर्गों के प्रति युवाओं के पूर्ण समर्पण की माँग करती थी। कन्फ्यूशियस के सिद्धांत के अनुसार पिता की मृत्यु के बाद भी पुत्र का कर्तव्य समाप्त नहीं हो जाता, बल्कि उसे अपना सम्मान समय-समय विभिन्न अनुष्ठानों और पूजा-अंर्चना के माध्यम से व्यक्त करना पड़ता है। इस व्यवस्था ने चीन के युवाओं को एक हद तक दब्बू, कायर और कमजोर बना दिया था। इससे उनके व्यक्तित्व का विकास प्रभावित होता था। पारिवारिक व्यवस्था में भी शोषण के कुछ औजार निहित थे, जो व्यक्ति के स्वतंत्र विकास में बाधा उत्पन्न करते थे।

चीन की अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित थी। शताब्दियों से शिक्षा दीक्षा कुछ मुट्ठी भर कुलीन लोगों का विशेषाधिकार माना गया था। शिक्षा का एक ही मुख्य उद्देश्य था। इसके जरिए बादशाह के दरबार के लिए अधिकारी विद्वानों का निर्माण करना था ताकि चीन देश को लगातार नियंत्रण में रखा जा सके। शिक्षा का दायरा भी बहुत सीमित था। इसमें आरंभिक काल में लिखी कुछ श्रेष्ठ पुस्तकों का ही अध्ययन कराया जाता था। एक शिक्षित व्यक्ति से यह आशा की जाती थी कि उसे प्राचीन ग्रंथ की बातें कंठाग्र हों। बेहतर स्मरण शक्ति वाला व्यक्ति अधिक विद्वान माना जाता था। पदाधिकारियों की नियुक्ति नागरिक सेवा परीक्षा के माध्यम से होती थी। इसमें भी स्मरण शक्ति की ही परीक्षा ली जाती थी और इसे ज्ञान का पर्याय माना जाता था। परम्परागत चीनी शिक्षा व्यवस्था की सबसे बड़ी विडंबना यह थी कि लिखित भाषा साहित्यिक या प्राचीन चीनी (**वेन ऐन**) भाषा थी, जो बोलचाल की भाषा (**बड हुआ**) से बिल्कुल अलग थी। इस भाषा पर कई वर्षों के अध्ययन के बाद ही अधिकार हो पाता था। शिक्षा के प्रसार में यह सबसे बड़ी बाधा थी, क्योंकि मेहनतकश लोगों के पास शिक्षा के लिए इतना समय देना असंभव प्रायः था। केवल अमीर लोग ही इसका लाभ उठा सकते थे। पदानुक्रम और असमानता पर आधारित कन्फ्यूशियाई सिद्धांत ने शिक्षा व्यवस्था के इस रूप को समर्थन दिया।

एक बात ध्यान देने की है कि गरीब ही कन्फ्यूशियसवाद का शिकार होते थे, शक्तिशाली लोग अक्सर इसका उल्लंघन करते थे। इसीलिए यह व्यवस्था इतने दिनों तक चल पाई। कहने का तात्पर्य है कि शासक वर्ग ने इस सिद्धांत का अपने हित के लिए उपयोग किया। पर इसके बावजूद यह चीन के सामाजिक परिवर्तनों को रोक नहीं सका। यह उसे संघर्ष और हिंसा से दूर रखने में भी बहुत दिनों तक कामयाब न रह सका।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित वक्तव्यों में कौन सही या गलत हैं? (✓) और (×) का निशान लगाइए।

   i) सांस्कृतिक क्रांति ने कन्फ्यूशियसवाद को चुनौती दी।

   ii) क्रांतिकारी परिवर्तनों के लिए कन्फ्यूशियाई कट्टरपंथी को चुनौती देने की कोई जरूरत नहीं थी।

   iii) कन्फ्यूशियसवाद ने नारी मुक्ति की वकालत की।

   iv) शक्तिशाली वर्ग ने कमजोर वर्ग पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए कन्फ्यूशियसवाद का उपयोग किया।

2) कन्फ्यूशियसवाद के दौरान नारी की स्थिति पर 5 पंक्तियों में टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

28.4 1911 की क्रांति और "नयी संस्कृति"

मांचू शासन ने 1905 में अपने शासन के अंतिम दिनों में, सुधार कार्यक्रमों के तहत नागरिक सेवा परीक्षाओं को समाप्त कर दिया। इसके स्थान पर भर्ती की कोई नयी कारगर व्यवस्था कायम न की जा सकी। प्रशासनिक तौर पर, चीन और भी कमजोर हो गया। एक तरफ साम्राज्यवादी शक्तियों का प्रभाव बढ़ता जा रहा था, दूसरी ओर पीकिंग सरकार राजनीतिक उठा पटक, षडयंत्रों और सत्ता के झगड़े में फँसती जा रही थी। आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक तौर पर चीन पिछड़ा रह गया। यह इतिहास का एक सत्य है कि किसी भी देश के लोग अधिक समय तक निष्क्रिय दबे हुए और शोषित नहीं रह सकते हैं। परिवर्तन का दौर आना अवश्यंभावी है और चीन में भी ऐसा हुआ। बुद्धिजीवियों, छात्रों और शिक्षकों ने लोगों को जागरूक किया और चीन को बदलाव के पथ पर अग्रसर किया। इससे चीन का भला हुआ। प्राथमिक तौर पर यह बौद्धिक क्रांति थी। चारों ओर राष्ट्रीयता, जनतंत्र, उदारवादविज्ञान, समाजवाद और साम्यवाद की बातें होने लगीं।

अक्तूबर, 1911 की चीनी क्रांति को "दिखावटी" माना जाता है, क्योंकि इससे कोई सामाजिक बदलाव नहीं आया, सामाजिक क्रांति की तो बात ही छोड़ दीजिए। पर वास्तविकता यह है कि इस क्रांति के कारण निम्नलिखित परिवर्तन हुए:

- सार्वभौम राजतंत्र और इसे वैधानिक बनाने वाली पारसत्ता के सिद्धांत की समाप्ति
- पूरे समाज में, समाज के स्थानीय स्तर तक शक्ति और सत्ता का बिखराव और इस पर सैनिकों का अधिकार
- कई स्तरों पर उस समाज की नैतिक सत्ता का ह्रास
- नये और पुराने स्थानीय शक्तिशाली और धनवान लोगों के मन में असुरक्षा का भाव
- अपने वैधता के आधार को स्थापित करने में नये गणतंत्र की असफलता।

1911 के काफी पहले ये सारी प्रवृत्तियाँ अंदर ही अंदर पनप रही थीं। केवल नागरिक सेवा परीक्षा व्यवस्था समाप्त करने से ही "शिक्षितों" की सामाजिक भूमिका पर काफी असर पड़ा। त्यांग सू-वेइ, येन पर, लिओग और अन्य लोगों के क्रांतिकारी सिद्धांत राजतंत्र की दैवी शक्ति पर पहले ही कुठाराघात कर चुके थे। निस्संदेह चीनी समाज के वस्तुनिष्ठ अध्ययन से कई स्थितियाँ उभर कर सामने आएँगी और कुछ सकारात्मक विकासों का भी पता चलेगा। हालाँकि अधिकांश चीनी बुद्धिजीवियों की नजर में यह पतन, बिखराव, भ्रष्टाचार और क्रूरता का काल था।

28.4.1 दार्शनिक और उनके विचार

येन फू और कांग-यू-वी जैसे सुधार-दार्शनिक अब दृढ़ता से यह महसूस करने लगे कि किसी भी समाज पर बदलाव थोपा नहीं जा सकता है और चीन में हो रहे बदलाव के इस चरण में गणतांत्रिक क्रांति एक गलत कदम था। लिंआग चि-चाओ ने क्रांति और राजतंत्र के पतन को इतिहास की मांग के रूप में स्वीकार किया। आरंभ में वह "गणतांत्रिक" निरंकुशता का कट्टर समर्थक था और उसका मानना था कि इसके माध्यम से आधुनिकता का आगमन हो सकता है। इसी तरह कांग का भी मानना था कि इस स्थिति में राजतंत्र के प्रतीक ही बिखरी हुई केंद्रीय सत्ता को जोड़ सकते हैं। इन तीन विचारकों में एक मूलभूत समानता यह थी कि ये तीनों ही सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की बात कर रहे थे। हालाँकि कांग ने

मानना था कि बिखराव की इस स्थिति को रोकने के लिए चीन को न्यूनतम आधारभूत विश्वास की जरूरत थी, जिसे सभी अपना सकें। इस परिस्थिति में येन फू ने "कन्फ्यूशियसवाद के लिए समाज" नामक निवेदन पत्र पर हस्ताक्षर किया, जिसके अनुसार कन्फ्यूशियाई दर्शन को राज्य-धर्म का दर्जा दिया जाना था। उसने तर्क दिया कि चीन अभी भी "पितृसत्तात्मक" समाज से "सैनिक" समाज तक पहुँचने की ड्योढ़ी पर खड़ा है और अभी भी इसे पितृसत्तात्मक विश्वास की जरूरत है।

सक्रिय क्रांतिकारी अलग ढंग से सोच रहे थे। उन्होंने भी यह दिखा दिया कि उनकी वैचारिक प्रतिबद्धता बहुत सुदृढ़ नहीं थी। जल्द ही वे सेनाध्यक्षों के युग की घृणित राजनीति में लिप्त हो गये। सन यात सेन ने सक्रिय रूप से राजनीतिक शक्ति के लिए एक आधार बनाने का प्रयास किया। जिन लोगों की राष्ट्रीयता का आधार प्राथमिकतः मांचू-विरोधी था, या "राष्ट्रीय तत्व" में जिन लोगों का विश्वास था, ने तुरंत महसूस किया कि भ्रष्ट मांचू साम्राज्य को निकाल बाहर करने के बाद हान प्रजाति अपने आप पूर्ण रूप से प्रतिस्थापित नहीं हो गयी। जो लोग राष्ट्रीय सांस्कृतिक अस्मिता को बचाए रखने के प्रति आग्रही थे, वे भी यह महसूस करने लगे कि इसे राजनीतिक तरीकों से नहीं सुरक्षित रखा जा सकता है। इसने साहित्य और परंपरागत विद्वता में संस्कृति की अवधारणा को समेटने की कोशिश की। इन्होंने चार मई के आंदोलन के दौरान साहित्यिक और भाषिक आन्दोलनों का जम कर विरोध किया।

28.4.2 छात्र समुदाय

बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों से विदेशों में रहने और पढ़ने वाले छात्रों की संख्या में वृद्धि हुई। इनमें से कइयों ने जापान और पश्चिम में शिक्षा ग्रहण की थी। कई युवा बुद्धिजीवी जापान के मेजी पुनरुद्धार आन्दोलन से प्रभावित थे। उनमें से बहुतों का यह मानना था कि चीन को रोगमुक्त करने के लिए विज्ञान और तकनीक अचूक दवा है। इसके अतिरिक्त चीनी परिदृश्य पर युवा, शिक्षित, राजनीतिक रूप से जागरूक, सामाजिक तौर पर सजग थे। जापान द्वारा लादी गई 'इक्कीस मांगों' ने इन लोगों के अहं और आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचाई, इनके बीच राष्ट्रीय भावना का प्रसार हुआ और इन्होंने अपने को इसी रूप में व्यक्त किया। युआन शिकाइ द्वारा राजतंत्र को पुनर्स्थापित करने के प्रयत्न ने भी उनको परेशान किया। ये संख्या में कम थे, पर इनकी विचारशीलता प्रबल थी। इन्होंने चार मई के आंदोलन का नेतृत्व किया। इनका स्तर साम्राज्य विरोधी था और विज्ञान, जनतंत्र तथा समाजवाद इनके प्रमुख स्तंभ थे। चीनी छात्रों ने कई विदेशी छात्र-संघों से भी सम्पर्क स्थापित किया। राष्ट्रप्रेम ऐसा था, जो उन्हें एक दूसरे से जोड़ता था। स्वदेश लौटने के बाद अधिकांश छात्र साम्राज्य विरोधी आन्दोलन में सक्रिय हो गये। समाज में कामगार समुदाय ही काफी छोटा था, क्योंकि उद्योग आदि काफी कम थे, इनमें भी छात्र देशभक्तों की संख्या ही अधिक थी। युद्ध छिड़ने के बाद बुर्जुआ वर्ग ने भी साम्राज्यवाद के निषेधात्मक पक्ष को महसूस किया और साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष को समर्थन देने लगे। समग्र रूप से यह कहा जा सकता है कि परिवर्तन की शक्तियों ने पीकिंग विश्वविद्यालय में स्वरूप ग्रहण किया और विभिन्न साहित्यिक और बौद्धिक गतिविधियों से भी इसको गति मिली।

आइए, पीकिंग विश्वविद्यालय (**बेदा**) के बारे में भी कुछ बातचीत कर ली जाए। इसकी स्थापना 1895 में हुई, आरंभ में इसकी भूमिका निषेधात्मक थी। इसके संकाय सदस्यों में वरिष्ठ पदाधिकारी शामिल थे और छात्र मुख्य रूप से अमीर घरानों से सम्बद्ध थे। नागरिक सेवा परीक्षा में उत्तीर्ण होना इन छात्रों का एकमात्र उद्देश्य था। सही ज्ञान की प्राप्ति का महत्व दूसरे नबंर पर था। संकाय सदस्यों की वरीयता उनकी विद्वता या शिक्षण क्षमता पर नहीं बल्कि मांचू दरबार में उनकी हैसियतों पर आधारित होती थी। विश्वविद्यालय अपनी बेहतर शिक्षा के कारण नहीं बल्कि अपनी कुख्याति के कारण मशहूर था।

सी यूआन-पी को बेदा के सुधार का पूरा श्रेय जाता है। उन्होंने फ्रांस और जर्मनी में शिक्षा ग्रहण की थी और काफी कम उम्र में नागरिक सेवा परीक्षा पास कर ली थी। वे दो संस्कृतियों के अनुभव से सम्पन्न थे। उन्होंने नागरिक सेवा छोड़ दी और 1912 में सन यात सेन की सरकार में क्रांतिकारियों के साथ जा खड़े हुए। लेकिन युआन शिकाइ के अध्यक्ष बनने पर उन्होंने त्यागपत्र दे दिया। कुछ वर्ष बाद सरकार ने उनसे पीकिंग

निवेदन को स्वीकार कर लिया। सी मूलतः एक शिक्षाविद् थे। इस संस्थान के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कार्य किए, जिसके कारण उन्हें चीनी पुनर्जागरण का जनक कहा जाता है। उन्होंने विद्वान लोगों को संकाय में शामिल किया, सरकारी दबाव से अकादमिक माहौल को मुक्त किया, अकादमिक स्वतंत्रता की वकालत की, विश्वविद्यालय में छात्रों और शिक्षकों को रहमी और स्वतंत्र बहस का मंच प्रदान किया। जिन लोगों को उन्होंने विभिन्न विद्यापीठों में शामिल किया उनमें ची तूमि न, हू शि और लि ता चाओ प्रमुख थे। बाद में इनमें से दो चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी के संस्थापक सदस्य बने। सी के सुधार के बाद पीकिंग विश्वविद्यालय में न केवल शिक्षा के स्तर पर सुधार हुआ बल्कि यहाँ परम्परागत शिक्षाविदों और आधुनिक विद्वानों को बहस करने का एक मुक्त मंच प्राप्त हुआ। इनके बीच से विचारकों का एक ऐसा दल सामने आया, जिसका छात्रों ने जमकर समर्थन किया। इस दल ने चीन की रूढ़िवादिता को चुनौती दी और आधुनिक युग का मार्ग प्रशस्त किया। इतिहासकार बियांको के अनुसार :

> "चार मई का आन्दोलन एक युवा आन्दोलन था, जिसमें नवयुवक शिक्षक और उनके छात्र समर्थकों ने युवाशक्ति के बल पर युवाओं की विचारधाराओं को अपने समाज पर आरोपित किया।"

पीकिंग विश्वविद्यालय के अलावा नये सांस्कृतिक आन्दोलन भी उभरे और न्यू यूथ (New Youth) नामक पत्रिका के माध्यम से अपने विचारों का प्रचार-प्रसार किया।

28.4.3 न्यू यूथ (New Youth)

सिन चिंग-निवन (न्यू यूथ) का प्रकाशन बुद्धिजीवी और साहित्यिक क्रांति का एक अन्य महत्वपूर्ण आयाम था। "साहित्यिक क्रांति" इस बुद्धिजीवी बदलाव का एक उल्लेखनीय आयाम था, आरंभ में यह मात्र लेखकों और प्रकाशकों का प्रयास था। जनवरी, 1917 में हू शि ने प्रस्ताव रखा कि अब से सभी प्रकार का लेखन क्लासिकल चीनी भाषा में न किया जाकर बोलचाल की भाषा में किया जाएगा। वस्तुतः शिक्षा के क्षेत्र में यह एक क्रांति थी, जिसने शिक्षा का मार्ग सबके लिए सुलभ कर दिया। जनसाधारण द्वारा प्रयुक्त भाषा ही जीवंत हो सकती है, हू शि के इस प्रस्ताव का कई विद्वानों ने समर्थन किया, इस प्रस्ताव के पीछे एक सामाजिक उद्देश्य निहित था। लोगों की पहुँच साहित्य तक सुलभ हुई, अब हू शि ने कहा कि साहित्य को आम लोगों की जिंदगी का बयान करना चाहिए। उसने यह महसूस किया कि यह साहित्यिक आन्दोलन नयी भाषा, नये शिल्प और नये विधान तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। इस प्रकार भारी भरकम और क्लिष्ट साहित्यिक परम्परा का तिरस्कार किया गया और उसके स्थान पर लोकप्रिय साहित्य के सृजन की बात सामने रखी गयी, ऐसा साहित्य जो सरल हो, समझ में आने वाला हो और अर्थपूर्ण हो। हू शि की अवधारणा का कुछ विरोध हुआ; पर वातावरण उसके अनुकूल था, अतः उसके विचारों का खूब प्रचार हुआ। 1920 तक सभी लेखकों ने देशी भाषा को ग्रहण कर लिया।

न्यू यूथ (नव युवा) ने सबसे पहले हू शि के विचार प्रकाशित किए। इस पत्रिका की शुरुआत 1915 में शंघाई में हुई थी। इसके सम्पादक ची-तू-सिम ने औपचारिक तौर पर इस अवधारणा को समर्थन प्रदान किया था। ची ने सम्पादकीय मंडल में व्यवस्था विरोधी कई विद्वानों को शामिल कर लिया। चीनी शिक्षित समुदाय के मानस पटल को साफ करने में इस पत्रिका ने महत्वपूर्ण भूमिका अपनाई। यह पत्रिका उस समय प्रकाशित हुई, जब बारंबार प्रेस की स्वतंत्रता को कठोर कानूनों से बाधित किया जाता था। इसके अलावा इस पत्रिका को वित्तीय संकट भी झेलना पड़ता था। इससे बीच-बीच में पत्रिका का प्रकाशन स्थगित कर देना पड़ता था। इसके बावजूद, न्यू यूथ छात्रों के बीच प्रेरणा का स्रोत बना रहा, जो इसके प्रत्येक सम्पादकीय को श्रद्धा के साथ ग्रहण करते थे। सभी दृष्टियों से यह पत्रिका क्रांतिकारी थी। एक उदाहरण यह है कि ची के छह सिद्धांत नवयुवकों के लिए ब्रह्म वाक्य थे। उन्होंने कहा था "स्वतंत्र बनो, दब्बू नहीं, प्रगतिशील बनो, रूढ़िवादी नहीं, वाचाल बनो, मूक नहीं, विश्ववादी बनो, संकीर्ण नहीं, व्यावहारिक बनो, रूपवादी नहीं, वैज्ञानिक बनो, कल्पनाशील नहीं।"

अपने नाम के अनुरूप इस प्रभावशाली पत्रिका ने नये युवा के निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया। इसने सभी चीनी युवाओं को अपने पूर्वजों की सीमा का अतिक्रमण करने को कहा और वैज्ञानिक प्रगतिशील और स्वतंत्र चिंतन का मार्ग अपनाने को कहा। इसने नये स्कूलों में शिक्षा प्राप्त कर रहे और नये विचारों से ओत-प्रोत युवा विद्यार्थियों को सम्बोधित किया।

पश्चिमी, नये और पुराने विचारों की समझ थी और वे विचारों के मुक्त आदान-प्रदान के कायल थे। वे जानते थे कि 1911 की क्रांति ने चीन को प्राचीन तंत्र से ऊपरी तौर पर ही मुक्त कराया था और अभी भी चीन साम्राज्यवादी शक्तियों के कब्जे में फँसा हुआ था। दुर्बल और लगातार क्षीण होती हुई रूढ़ परम्परा को वे एक सुलभ विकल्प देने की कोशिश कर रहे थे। वे ची के इस कथन से सहमत थे कि विज्ञान और प्रजातंत्र के सहारे ही चीन को बचाया जा सकता था। "राजनीति में गणतंत्रीय सरकार और विचार क्षेत्र में विज्ञान ही आधुनिक सभ्यता की सम्पदा है।" न्यू यूथ के माध्यम से ही ची ने कन्फ्यूशियसवाद पर आक्रमण किया और पत्रिका ने अपने आरंभिक दिनों में फ्रांसीसी क्रांति के आदर्शों (स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व) का प्रचार किया। (बाद में ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा के अनुयायी हो गये, 1921 में चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रथम महासचिव बने।)

न्यू यूथ का नवयुवकों पर इस हद तक प्रभाव था कि छात्र और युवा बुद्धिजीवी प्रत्येक मुद्दे पर इस पत्रिका की राय की प्रतीक्षा करते रहते थे और इसे उत्सुकतापूर्वक पढ़ते थे। दूसरे शब्दों में इस पत्रिका ने **गोस्पेल** की भूमिका निभाई। विभिन्न मुद्दों पर इस पत्रिका में बहस और विचार-विमर्श हुआ। इस पत्रिका में मुद्दों पर जीवंत बहस हुआ करती थी और धीरे-धीरे यह युवा, देशभक्त और सामाजिक तौर पर जागरूक युवा शक्ति की वाणी बन गयी।

28.4.4 परम्परा पर आक्रमण : बुद्धिजीवियों के प्रयास

नये सांस्कृतिक आन्दोलन को समग्र रूप में देखने से यह पता चलता है कि यह मूलतः सम्पूर्ण सांस्कृतिक विरासत पर एक आक्रमण था। ची द्वारा चीनी नवयुवकों को किया गया यह संबोधन "स्वतंत्र बनो दब्बू नहीं, प्रगतिशील बनो रूढ़िवादी नहीं, आक्रमक बनो निष्क्रिय नहीं" केवल कन्फ्यूशियाई सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था पर ही सीधा आघात नहीं था बल्कि सम्पूर्ण परम्परा पर आक्रमण था, जिसमें "कन्फ्यूशियसवाद, ताओवाद और बौद्ध धर्म के तीन उपदेश" भी शामिल थे। लोगों में व्याप्त अंधविश्वासों की तो बात ही छोड़िए।

हालांकि डार्विन के विकासवादी सामाजिक सिद्धांत की भाषा का उपयोग किया गया था, पर "पुराने समाज" और "पुरानी संस्कृति" को आलोचनात्मक दृष्टि से देखा गया था, जिन्होंने देश की आत्मा को कुचल डाला था। क्रांति से यह बात साफ हो चुकी थी कि समाज में व्याप्त कुरीतियों को छोड़े बिना सम्पूर्ण परम्परागत राजनीतिक संरचना को हटाया नहीं जा सकता था। पुरानी परम्परा में न केवल संघर्ष करने की क्षमता थी, बल्कि यह अपने को पुनःस्थापित भी कर सकती थी। युआन शिकाइ द्वारा राजतंत्र की स्थापना का प्रयास इसका एक प्रमुख उदाहरण था। अतः अब एक ही उद्देश्य सामने था, देश की चेतना और सोच में आमूल परिवर्तन। "नये सांस्कृतिक" नेताओं का यह मानना था कि किसी भी प्रकार की राजनीतिक कार्यवाही या संस्थागत सुधार के पहले इस काम को पूरा करना जरूरी है। 1917 में अमेरिका से लौटने के बाद युवा हू शि ने स्पष्ट रूप से कहा कि बीस वर्षों तक हमें राजनीति की बातें नहीं करनी है। वस्तुतः ये विचार सम्पूर्ण नये सांस्कृतिक दल की आम विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते थे। उनकी मुख्य संस्था के नाम से ही पता चलता है कि उनके लक्ष्यीभूत श्रोता शिक्षा प्राप्त नवयुवक थे, जो पुराने और सड़े हुए समाज से पूरी तरह प्रभावित नहीं थे।

यहाँ भी हम न्यू यूथ के दृष्टिकोण और मुख्य चिंतकों के सोचने में थोड़ा फर्क पाते हैं। अपनी दुविधाओं पर विजय पाकर इन चिंतकों ने भी बदलते समाज में सचेतन विचारों की भूमिका पर बल दिया। हालांकि उनके इस शैक्षिक दृष्टिकोण को भी समर्थन मिला कि मांचू सुधार आंदोलन के दौरान परिवर्तन की शुरुआत हो चुकी थी या समाज के संस्थागत ढाँचों में इसकी शुरुआत होने वाली थी। नये सांस्कृतिक दल के विश्लेषण ने 1919 के पहले ही उन्हें यह मानने के लिए मजबूर कर दिया था कि सम्पूर्ण माहौल को बदले बिना समाज को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता था।

1919 के पहले नये सांस्कृतिक आन्दोलन का एक आयाम यह उभर कर सामने आया कि ... राजनीतिज्ञों और बुद्धिजीवियों के बीच एक स्पष्ट रेखा खींच दी। भविष्य में भी यह ...तर जारी रहा। यह अलगाव 1905 में परीक्षा व्यवस्था की समाप्ति में स्पष्ट हो चुका

बुद्धिजीवियों ने राजनीतिक जीवन में हिस्सा लिया। इसके बावजूद बुद्धिजीवियों खासकर शिक्षक और साहित्यकार, ने अपनी एक अवधारणा बना ली थी कि उन्हें स्वायत्तता का अधिकार हासिल था। यह मानसिकता 1949 के बाद भी कायम रही।

"नये साहित्य" का उदय नये सांस्कृतिक आन्दोलन का एक प्रमुख और उल्लेखनीय आयाम था। यहाँ भी हम देखते हैं कि साहित्य प्रमुख रूप से मनुष्य के स्वायत्त सोच का परिणाम था। हालांकि कविता और ललित साहित्य, साहित्य की प्राचीन और उच्च संस्कृति का अंग थे। पर आदर्श रूप में वे कभी भी अपने अंदर की खोज से अलग नहीं हुए। ऐसे बहुत से उदाहरण मिल सकते हैं जिनमें "साहित्यिक" रूझान तो है, पर उन्होंने कभी भी अपने को साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं प्रदान की हो। इसके अलावा कथा-कहानी-उपन्यास लिखना उच्च सांस्कृतिक गतिविधि का अंग नहीं माना जाता था। लियांग ची-चाओ ने कथा-कहानी को समर्थ साहित्यिक विधा के रूप में विकसित करने की वकालत की ताकि उसके माध्यम से सामाजिक-राजनीतिक विचारों को फैलाया जा सके। लूशुन और उनके छोटे भाई 1911 से पहले ही जापान में रहकर चीनी जनता की आवाज को साहित्यिक अभिव्यक्ति दे रहे थे। पर नये सांस्कृतिक आन्दोलन के प्रयासों से ही नये देशी साहित्य को सम्मान प्राप्त हो सका। नयी संस्कृति ने कथा-कहानी विधा को एक सम्मानजनक दर्जा प्रदान किया और उसकी अपेक्षा थी कि यह विधा जीवन से जुड़े और आम आदमी के जीवन का मार्गदर्शन करे। चीन में पनप रहे इस नये साहित्य का एक सामाजिक नैतिक उद्देश्य भी था। इस नैतिक उद्देश्य से सभी लेखकों को नहीं बाँधा जा सकता था और कुछ लेखक ऐसे भी थे जो शुद्ध साहित्यिक स्तर पर इस नैतिकता से नहीं बंधे थे, पर अंततः वे भी समाज के ही प्रवक्ता थे।

यहाँ तक कि कुओ मो-जो, यू-ता-फ और अन्य लोगों का रोमानी सृजनात्मक समूह, जो "कला के लिए कला" में विश्वास रखता था, भी "अकलात्मक" प्रयासों से प्रभावित हुए। 1919 के पहले ही परम्परागत जीवन के बंधनों से मुक्त होने की आकांक्षा ने रोमानी धारा को जन्म दिया जिसमें व्यक्ति के महत्व और अस्मिता की बातें होने लगी थीं। 1911 के बाद के वर्षों में राजनीतिक मुक्ति की बात नाटकीय ढंग से क्षीण होने लगी, युवा बुद्धिजीवी व्यक्तिगत मुक्ति की बात करने लगे, वे उस जगत से अपने को अलग करने लगे, परम्परागत मूल्यों में उनका विश्वास नहीं रहा। नयी संस्कृति के उदय में इन तत्वों ने काफी मदद की। एक प्रकार से उदारवादी और रोमानी दोनों सन्दर्भों में "व्यक्तिवाद" का प्रभाव मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन पर पड़ा। पुराने लोगों के गले से यह बात नहीं उतरती थी, जो अभी भी परम्परागत कन्फ्यूशियाई पारिवारिक मूल्यों के दायरे में जी रहे थे। कुछ समय के लिए ही सही, व्यक्तिवाद सामाजिक-राजनीतिक उद्देश्य से पूरी तरह जुड़ा प्रतीत नहीं होता था। हू शि द्वारा प्रायोजित न्यू यूथ के इब्सेन अंक में इब्सेन के नाटक "गुड़िया घर" (यह एक नर्वीजियन नाटक है, जिसमें परिवार और समाज में नारी मुक्ति का समर्थन किया गया है।) का अनुवाद इस चिंता की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति थी। इसी प्रकार "सृजनात्मक समाज" रोमानी संसार में आनंद विभोर था, इसके लेखक अपनी अतृप्त भावनाओं को अभिव्यक्त कर रहे थे और "कला के लिए कला" ही उनका मुख्य सरोकार था। लिओ ली के शब्दों में "फ्रांसीसी प्रतीकात्मक अवधारणा से काफी दूर जिसमें कहा गया है कि कला केवल जीवन का पुनर्निर्माण नहीं करती बल्कि कला एक नया संसार बनाती है जिसमें कलाकार जाकर शरण ले सकता है और अपना अलग तर्क निर्मित कर सकता है तथा अपने को जीवन से जोड़ भी सकता है।"

नये संस्कृति आंदोलन में परम्परा और विरासत की "उच्चतर आलोचना" की शुरुआत हुई। शि आदि विद्वानों ने परम्परागत विरासत को आलोचनात्मक दृष्टि से देखा। विभिन्न परम्पराओं और धर्मग्रंथों की प्रासंगिकता और प्रामाणिकता पर चीनी विद्वान काफी अर्से से वाद-विवाद करते आ रहे थे और विभिन्न मत प्रकट करने की परम्परा थी। चिंग साम्राज्य के इम्पिरिकल रिसर्च स्कूल के भाषाशास्त्रियों ने श्रेष्ठ ग्रंथों की आलोचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत की थी। लेकिन इस बात में सन्देह है कि बीसवीं शताब्दी के उनके अनुयायियों ने शुद्ध आलोचना पद्धति अपनायी।

कांग-यू-वी, जो किसी भी दृष्टिकोण से आलोचक नहीं था, ने कन्फ्यूशियसवाद की अपनी नयी व्याख्या की स्थापना के लिए शताब्दी के आरम्भ में कुछ पुराने धर्मग्रंथों की रूढ़िवादिता पर योजनाबद्ध तरीके से आक्रमण किया।

हू शि के अनुसार "राष्ट्रीय विरासत को पुनर्व्यवस्थित" करने के आंदोलन के पीछे एक गहरा वैचारिक उद्देश्य निहित था। लारेंस श्निदर के शब्दों में, "रूढ़िवादी इतिहासों की

प्रामाणिकता को खंडित करने और धर्म ग्रंथों के ऐतिहासिक आधारों को खंडित करने के लिए विज्ञान के औजारों का उपयोग करना होगा।" परम्परा की जकड़ी हुई रूढ़ियों को दूर करने का एक अच्छा तरीका यह होता है कि उन तथ्यों और मिथकों की प्रामाणिकता को नेस्तनाबूद कर दिया जाए, जो उस परम्परा को आधार प्रदान करते हैं। अंत में यह कह देना आवश्यक है कि "राष्ट्रीय अध्ययन" के कई विद्वानों ने भी परम्परा का अध्ययन करने के लिए और ऐतिहासिक अध्ययन की आलोचनात्मक व्याख्या करने के लिए कट्टरपंथियों और परम्परागत तरीकों का इस्तेमाल किया यहाँ तक कि "नव-परम्परावादी" विद्वानों के पास भी हू शि की मूर्तिभंजक दृष्टि नहीं थी।

"नयी संस्कृति" के मूर्तिभंजक विद्वानों के उद्देश्य पूर्णतः विध्वंसक नहीं थे। हालांकि भविष्य के निर्माण के लिए वे समकालीन पश्चिमी देशों को "मॉडल" के रूप में देख रहे थे, पर एक चीनी राष्ट्रवादी होने के नाते से अपने को अपने अतीत से काट कर नहीं देख सकते थे। चीनी परम्परा में वे उन प्रगतिशील तत्वों को खोज रहे थे, जिसके आधार पर आधुनिकता की नींव रखी जा सके। हू शि के अमेरिकी शिक्षक जॉन देवे ने वैज्ञानिक पद्धति की बात करते हुए कहा था कि आधुनिक युग का जन्म अतीत के गर्भ में होता है। हू शिं और अन्य लोगों ने परम्परा में उन तत्वों की खोज की जिससे आधुनिकता का सूत्रपात किया जा सकता था। हू शि ने अपनी "वैज्ञानिक" पद्धति के तहत चीन के आरम्भिक विचारकों में तर्कपद्धति की खोज की, अतीत के समृद्ध और प्रगतिशील देशी साहित्य को महत्व दिया, जो मरणासन्न रूपवादी संभ्रांत साहित्य से कहीं अधिक लोकोपयोगी और श्रेष्ठ था। इसे लोकप्रियतावादी पद्धति के तहत संभ्रांत "उच्च संस्कृति" को अवमानना मिली और उसे शोषक बताया गया और लोक साहित्य को प्रगतिशील और आधुनिक गुणों से सम्पन्न माना गया। लोक साहित्य का अध्ययन किया जाने लगा। हू शि नये साहित्य और नये विद्वानों को साथ लेकर चलना चाहता था, अतः अतीत के देशी साहित्य की छानबीन करते समय उसने दोनों के हितों का ध्यान रखा। सभी प्रकार के साहित्यिक प्रयास (गंभीर या मनोरंजक साहित्य दोनों) नये सांस्कृतिक आंदोलन में घुलमिल गये।

इस आंदोलन के अग्रणी नेताओं में कुछ आम सहमति थी, पर जब हम एक दूसरे की तुलना करने बैठते हैं, तो हू शिह ची तू शुम और लू-शून के विचारों में काफी अंतर पाते हैं। 1911 के पूर्व एक युवा छात्र के रूप में हू शि येन फू और लिअंग चि-चाओ के डार्विनवादी सामाजिक सिद्धांतों में रुचि रखता था और उससे प्रभावित था। उस पर संयुक्त राष्ट्र और जॉन देवे के दर्शन का काफी प्रभाव था। उसने ची के प्रसिद्ध सिद्धांत "विज्ञान और प्रजातंत्र" की अपने ढंग से व्याख्या की थी। इसे वह आधुनिकीकरण का अपरिवर्तनीय मूल मंत्र मानता था। येन फू की विज्ञान की अवधारणा को एक रूप देने का एक प्रयास था। हू शि ने बीसवीं शताब्दी के आरंभ में अमेरिका में प्रजातंत्र को फलते-फूलते देखा था। उसने भी देवे के प्रजातंत्र संबंधी विचारों को स्वीकार किया था।

जॉन देवे के दर्शन में विज्ञान और प्रजातंत्र एक-दूसरे में अनुस्यूत थे। उसने सभी प्रकार की समस्याओं के लिए विज्ञान के कार्य-कारण संबंध का अनुमोदन किया, जिसके चलते पूर्व स्थापित सभी प्रकार की ईश्वरीय मान्यताएँ और धारणाएँ ध्वस्त हो गयीं, चाहे वह धर्म का क्षेत्र हो, या राजनीति या आध्यात्मिक। इस प्रकार इनके स्वतंत्रता के दावे के लिए एक ठोस आधार प्रस्तुत कर दिया। यदि सब लोग मिल जुलकर विज्ञान का सहारा लें और मानवीय तथा सांस्कृतिक समस्याओं के हल के लिए इसकी सहायता लें, तो अंधविश्वासों और ईश्वरी मान्यताओं से मुक्ति मिल सकती है। विज्ञान ने प्रकृति को काफी सुलझे हुए ढंग से देखा परखा है। उससे मनुष्य की समस्याओं का समाधान भी ढूँढा जा सकता है और स्वतंत्रता और समानता जैसे तत्वों को यथार्थ रूप दिया जा सकता है। शिक्षा के माध्यम से लोगों में वैज्ञानिक पद्धति विकसित करनी होगी ताकि लोगों में विश्लेषण क्षमता पैदा हो और अपनी समस्याओं पर लोग सामूहिक तौर पर सोच विचार कर सकें, अपने हितों को पहचान सकें। हालांकि देवे के "राजनीतिक प्रजातंत्र" और संविधानवाद की तीखी आलोचना हुई, पर इस बात में कोई संदेह नहीं है कि उसका सम्पूर्ण दृष्टिकोण यह था कि संवैधानिक प्रजातंत्र को लोग एक नियम के तहत निश्चित रूप से मान्यता प्रदान करेंगे। शि ने देवे के सिद्धांत के मुताबिक विज्ञान को एक पद्धति के रूप में अपनाया, पर एक दार्शनिक के रूप में किए गये उसके सूक्ष्म ज्ञानात्मक मुद्दों को उसने पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया। उसने देवे के सिद्धांत में से व्यावहारिक बातें ग्रहण कीं और उसे सरल रूप में प्रस्तुत किया। इस मामले में उसने काफी हद तक येन फू और लिआंग की परम्परा का पालन किया, हालांकि उसका प्राकृतिकवाद में विचार ताओवादी-बौद्ध मत से काफी अलग था। देवे ने सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं और "मात्र राजनीतिक" की अवधारणा पर

विचार करते समय वैज्ञानिक शोध और शिक्षा पर बल दिया। इससे प्रभावित होकर हू शि ने चीन के अव्यवस्थित और गैर-जिम्मेदाराना राजनीतिक संघर्षों को चीन के सही विकास के लिए अप्रासंगिक मान लिया।

देवे का वैज्ञानिक खोज और शिक्षा पर जोर सम्पूर्ण सांस्कृतिक आंदोलन के अनुकूल था, जिसमें सम्पूर्ण समाज के चेतन को बदलने की बात की जा रही थी। अतः 1917 में जब हू शि चीन लौटा, तो वह स्वाभाविक रूप से इस आन्दोलन से जुड़ गया। इस आन्दोलन के बृहद शैक्षिक उद्देश्यों को सामने रखकर ही उसने भाषा सुधार में गहरी दिलचस्पी दिखाई। नये साहित्य में उसकी दिलचस्पी ने उसके साहित्य प्रेम को उजागर किया। साथ ही साथ इस विश्वास को बड़ी शिद्दत के साथ व्यक्त किया कि साहित्य नये विचारों के प्रचार-प्रसार का समर्थ वाहक होता है। शि के सम्पूर्ण जीवन को देखने से पता चलता है कि उसे साहित्य और ज्ञान में बड़ी रुचि थी और उसका मानना था कि "राष्ट्रीय विरासत का पुर्नसंगठन" एक नाजुक सांस्कृतिक कार्य है। इसका यह मतलब नहीं है कि उसने अपने लेखन में सामाजिक और राजनीतिक सवालों को उठाया ही नहीं। पर वह अपने लेखन के माध्यम से राजनीतिक कार्यकलापों को प्रभावित न कर सका। अतः उसने सांस्कृतिक विरासत के क्षेत्र में "वैज्ञानिक खोज" का ज्यादातर प्रयोग किया। वस्तुतः ची-तू-शिम ने ही "विज्ञान और प्रजातंत्र" का नुस्खा सामने रखा था। लेकिन सूक्ष्मता से अवलोकन करने पर पता चलता है कि इन दोनों मामलों में हू शि से उसके विचार भिन्न थे। उसके तेवर हू से अलग थे। वह आवेश पूर्ण और अविवेकी स्वभाव का था। उस पर भी पश्चिमी प्रभाव था, पर यह प्रभाव आंग्ल-अमेरिकी न होकर फ्रांसीसी था। यह भी एक महत्वपूर्ण तथ्य था। विज्ञान के प्रति उसकी दृष्टि डार्विन के सिद्धांत के अनुरूप थी। विज्ञान एक ऐसा हथियार था जिससे परम्परागत मूल्यों को ध्वस्त किया जा सकता था। चीन में उसके इस विकासवादी सिद्धांत को पूर्णतः नजरअंदाज कर दिया गया। इससे उसे काफी दुःख हुआ। हालांकि हू शि की तरह वह भी मूलतः "वैज्ञानिक" नियत्ववाद को बुद्धिजीवी संभ्रांतों की शक्ति में गहरे विश्वास के साथ जोड़ने में कामयाब हो गया था। ची की विचारधारा में विज्ञान व्यवहारमूलक पद्धति का स्थान ग्रहण नहीं कर सका। बाद में उसने बिना किसी भाव परिवर्तन के विज्ञान का प्रयोग डार्विनवाद के लिए न करके मार्क्सवाद के लिए करना शुरू कर दिया।

अपनी वैज्ञानिक पद्धति की अवधारणा के कारण हू शि राष्ट्र के सम्पूर्ण क्रांतिकारी बदलाव की बात नहीं पचा पाया। ची फ्रांसीसी क्रांति को आधुनिक प्रजातंत्र का शीर्षस्तंभ मानता था। उसने क्रांतिकारी बदलाव की अपील को अपेक्षाकृत अधिक सहजता से ग्रहण किया, हालांकि 1919 के पूर्व उसका पूरा दृष्टिकोण राजनीति विरोधी था और वह भी "सांस्कृतिक" दृष्टिकोण का समर्थक था। हालांकि दोनों ने दो वर्ष (1917-19) एक साथ मिलकर काम किया और इस बीच व्यक्तिवाद और प्रजातंत्र के तत्व संबंधी उनकी विचारधारा में काफी समानता रही।

लू शुन चीन के सर्वप्रमुख साहित्यिक प्रतिभा के रूप में उभर कर सामने आया। उसकी विचारधारा अपने आप में विशिष्ट थी। अपने सम्पूर्ण जीवन काल में वह तामसी शक्तियों से लड़ता रहा। अपने युगकाल में वह विकासवादी सिद्धांत से प्रभावित था, पर जल्दी ही (1917 के पहले ही) उसके मन में इसके प्रति शंकाएँ उठने लगी थीं। अपने व्यक्तिगत अनुभवों, भ्रष्टाचार के प्रति उसकी घृणा, चीनी जनसमुदाय की "दास मानसिकता" आदि के कारण 1911 के पहले ही विकासवादी सिद्धांत से उसका विश्वास उठने लगा था। नित्शे के लेखन को उसने पढ़ा था, और उसका उस पर प्रभाव भी पड़ा, पर वह नित्शेवादी नहीं हो गया। हाँ, उसे वहाँ से कुछ प्रतीक मिले जो मानव की "दासता प्रवृत्ति" से लड़ने में सक्षम थे। कुछ समय के लिए वह नित्शवादी-बाइरोनिक काव्य नायक के सपने में खोया था, जो मनुष्य को अंधविश्वासों से मुक्त कराता था। येन फू के प्रभाव के बावजूद लू शून ने पश्चिमी तकनीकी विचारधारा से अपने को अलग रखा। उसने पश्चिमी साहित्य के उस यथार्थवाद से भी अपने को दूर रखा, जहाँ मनुष्य के नैतिक जीवन पर जरूरत से ज्यादा जोर दिया जाता था।

1911 के बाद की घटनाओं ने लू शून को निराश किया। नित्शेवादी साहित्यिक नायक समाज को बदल सकता है, उसकी यह धारणा तेजी से बिखर गयी। चीन के बुरे अतीत और वर्तमान के प्रति उसका पूरा दृष्टिकोण "नयी संस्कृति" के अन्य विद्वानों की अपेक्षा निराशाजनक था। समकालीन चीन की क्रूरता, भ्रष्टाचार और दिखावटीपन परम्परागत मूल्यों के ह्रास को प्रतिबिंबित नहीं करता था, बल्कि वस्तुतः उन विध्वंसक मूल्यों का प्रदर्शन था। उन्होंने अपनी कहानी "पागल की डायरी" में लिखा है कि चीनी समाज

"आदमखोर" हो गया है, यह इसका मात्र यथार्थ नहीं है, बाकि इसके आदर्श भी आदमखोर हैं। यहाँ तक कि 1911 के पहले के युवा क्रांतिकारी भी इस दु:स्वप्न से पीड़ित थे। लू शून ने नये सांस्कृतिक आन्दोलन के उद्देश्य को देखते हुए एक बार फिर कलम उठाई, पर इसका प्रभाव बहुत सीमित सिद्ध हुआ।

लू शून के "सम्पूर्ण अस्वीकार" के बावजूद उनकी साहित्यिक कल्पनाशीघ्र बेजोड़ थी। लू शून बराबर चीन के अतीत के गैर परम्परावादी रूझानों से अभिभूत रहे।

उनका अतीत हू शि के अतीत से बिल्कुल भिन्न था। यह दक्षिणी प्रदेश का नव-ताओवादी बोहेमियन अतीत था, जिसमें लोकतत्व और कुछ खास व्यक्तिगत मूल्यों को तरजीह दी गयी थी। पर इनमें से कोई भी लू शून को परम्परा के सम्पूर्ण अस्वीकार से विचलित न कर सका।

बोध प्रश्न 2

1) नयी संस्कृति के विकास में छात्रों की भूमिका का उल्लेख 10 पंक्तियों में कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2) बेदा (पेकिंग विश्वविद्यालय) में किए गये सुधारों का 5 पंक्तियों में उल्लेख कीजिए।

....
....
....
....
....

3) "विज्ञान और प्रजातंत्र" नुस्खे पर 10 पंक्तियों में विचार-विमर्श कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....

4) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही या गलत है? (✓) और (×) का निशान लगाइए।

i) न्यू यूथ पत्रिका ने नये सांस्कृतिक आंदोलन का प्रचार-प्रसार किया।

ii) नये सांस्कृतिक आंदोलन के दौरान देशी साहित्य की खोज की गयी।

iii) जान देवे हू-शि का शिक्षक था।

iv) लू शून एक साहित्यकार था।

28.5 चार मई की घटना के परिणाम

यह नया सांस्कृतिक आंदोलन चार मई के आंदोलन के रूप में प्रस्फुटित हुआ या यूं कहें कि यह आन्दोलन उसमें समाहित हो गया। इस दौरान बहुत से सिद्धांत असंख्य पत्रिकाओं के माध्यम से सामने आये। चार मई के आंदोलन ने जनता के छिपे हुए आक्रोश को व्यक्त कर दिया। इसमें नयी संस्कृति की अवधारणाएँ खासकर सांस्कृतिक विरासत के पूर्ण अस्वीकार की बात सामने आयी।

इन घटनाओं का मुख्य परिणाम यह हुआ कि चीन की समस्या का शुद्ध रूप में सांस्कृतिक विश्लेषण किया गया। चार मई की घटना एक राजनीतिक घटना थी, यह विदेशी साम्राज्यवाद के खिलाफ एक जबरदस्त राजनीतिक कार्यवाई थी। कुछ समय के लिए यह एक प्रकार का जनान्दोलन भी था, हालांकि इसमें छात्र और शहरी लोग ही शामिल थे। अभी तक नये सांस्कृतिक नेता चीन की घरेलू समस्याओं से ही जूझ रहे थे। अपने डार्विनवादी सामाजिक अवधारणा के कारण वे यह न समझ सके कि चीन की इस स्थिति का एक प्राथमिक कारण साम्राज्यवादी शक्तियों का हस्तक्षेप भी है। हालांकि राष्ट्रवादी दबावों और छात्रों के जोर से कुछ बुद्धिजीवियों को चीन के राजनीतिक अंधेरेपन से मुक्त कराने के लिए अल्प समय के लिए अपना सांस्कृतिक प्रयास छोड़ देना पड़ा।

यहाँ तक कि हू शि जैसे गैर राजनीतिक व्यक्ति को भी अपना तरीका बदलना पड़ा। इससे उसके सोच में तत्कालीन बदलाव आया। उसे यह लगने लगा कि बुद्धिजीवियों का सांस्कृतिक परिवर्तन पूर्ण हो चुका है और अब सामाजिक परिवर्तनों के माध्यम से इसका संक्रमण राजनीति में होने वाला है। 1919 में जॉन देवे खुद चीन में उपस्थित था। उसने इस आशा को प्रोत्साहित किया। उसने अपने सर्वेक्षण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि छात्र जनसमुदाय के बीच शिक्षा का प्रसार कर रहे हैं, सामाजिक और धार्मिक कार्य कर रहे हैं तथा आपस में बौद्धिक विचार-विमर्श कर रहे हैं। हू शि ने "जन शिक्षा, नारी मुक्ति, विद्यालय सुधार" की बात की। यह मान लिया गया कि ये सभी उद्देश्य पूरे हो जाएंगें। ऐसा मानते वक्त 1919 में सैन्य शासन की राजनीतिक शक्ति को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया गया। हालांकि 1922 में हू शि ने एक पत्रिका निकाली, हिंदी में जिसका नाम होगा "कोशिश"। यह खुले रूप में एक राजनीतिक पत्रिका थी। इसी समय हू शि को इस बात का दुखद अनुभव हुआ कि राजनीतिक शक्तियों के पास इतनी ताकत होती है कि वह व्यक्ति के बोलने की स्वतन्त्रता और कार्य करने की स्वतंत्रता को कुचल सकता है। वह राजनीतिक कार्यवाई की पृष्ठभूमि में निहित "मुद्दों" से भी परिचित हो गया था। उसकी राजनीतिक कार्यवाई उदारवादी थी। उसने सरकार के निरंकुश कार्यकलापों के खिलाफ "नागरिक अधिकारों" का आह्वान किया।

हू शि ने अपने राजनीतिक प्रस्तावों के तहत "अच्छे आदमियों" की सरकार और "योजनाबद्ध तरीके से काम करने वाली सरकार" की माँग की। उसकी सबसे बड़ी समस्या यह थी कि चीन की तत्कालीन परिस्थिति में विज्ञान और प्रजातंत्र में कैसे तालमेल स्थापित किया जाए। उसका विश्वास था कि कुछ वैज्ञानिक मानसिकता वाले लोग (जो "अच्छे" और कम संख्या में थे) आएंगे और सत्ता हासिल करेंगे। साम्यवादियों और राष्ट्रवादियों की तरह हू भी अपने को बुद्धिजीवी संभ्रांत मानने को मजबूर था। सेनाध्यक्षों की सरकार (**हू पेइ फू**) के साथ उन्होंने काम करने के सपने देखे थे। यह अल्पजीवी साबित हुई। इसके तुरंत बाद हू शि अपने सांस्कृतिक क्षेत्र में आ गया।

सन यात सेन और उनके साथियों ने राष्ट्रवादी राजनीतिक रुख का सबसे ज्यादा फायदा उठाया। यह माहौल चार मई के आंदोलन के दौरान बना था। इस माहौल के कारण सारे वैचारिक मतभेद सिमट गये। 1911 से लेकर 1919 तक का काल ऊर्जाहीन था। इस दौरान सन यात सेन ने मजबूत केंद्रीय सरकार की स्थापना के अपने उद्देश्य को अंजाम देने की कोशिश की। अपनी इस कार्य पद्धति में उसने कभी भी चीन की संस्कृति में "नयी संस्कृति" के योगदान को स्वीकार नहीं किया। यहाँ तक कि 1911 के पहले भी उसका यह सोचना था कि अतीत की उपलब्धियों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और उसके

सामने यह बिल्कुल स्पष्ट था कि किस चीज को तरजीह देनी है, किस चीज को नहीं। 1911 के बाद के वर्षों में एक प्रकार की कड़वाहट फैली, इस दौरान उसने चीन में एक अनुशासित और एकीकृत दल संगठित करने की समस्या पर काम किया। यह कहा जा सकता है कि पश्चिमी संवैधानिक प्रजातंत्र पर उसका विश्वास कम होने लगा। अतः सन यात सेन और उसके अनुयायी अगर अक्तूबर क्रांति में लेनिन के पार्टी संगठन और सैन्य शक्ति से निबटने के सोवियत तरीके की ओर तुरंत आकर्षित हुए और रुचि दिखाई, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उसके कुछ अनुयायियों ने पश्चिमी प्रवृत्ति को समझने के लिए साम्राज्यवाद संबंधी लेनिनवादी सिद्धांत को तेजी से अपनाया।

चार मई के आंदोलन के काल में रूसी क्रांति और इसके सिद्धांतों ने चीन में अपना काफी प्रभाव स्थापित किया और इससे इस आंदोलन के सैद्धांतिक और दार्शनिक सोच में एक और आयाम जुड़ा। चीन में लेनिनवादी सिद्धांत क्रमशः लोकप्रिय होता गया। साम्यवादियों के रूप में बुद्धिजीवियों का एक ऐसा दल सामने आया जो एक नयी और वैज्ञानिक संस्कृति का प्रसार करना चाहते थे। उनका अंतिम उद्देश्य जन संगठन था। जन संगठन राजनीतिक और सैनिक शक्ति प्राप्त करने का भी एक साधन था। यह स्वतः स्पष्ट है कि 1919 के पहले "नयी संस्कृति" में कहीं भी राजनीतिक उद्देश्यों के लिए जन संगठन की बात नहीं की गयी थी, हालांकि जन शिक्षा की बात यह "संस्कृति" करती थी।

बोध प्रश्न 3

1) राजनीतिक शक्ति के प्रति हू शि के दृष्टिकोण पर विचार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2) चीनी बुद्धिजीवियों द्वारा स्वीकार्य लेनिनवादी विचारों का उल्लेख 5 पंक्तियों में कीजिए।

....
....
....
....
....

28.6 सारांश

1911 में चिंग साम्राज्य के पतन और 1919 के चार मई के आंदोलन के बीच एक तरफ राजनीतिक कड़वाहट, आर्थिक अस्थिरता और सामाजिक तनाव फैला हुआ था तो दूसरी तरफ इस अस्थिरता और अव्यवस्था के बीच "नयी संस्कृति" का जन्म हो रहा था। इस निषेधात्मक घटना के दौरान ही लोगों को चीन के बेहतर भविष्य के लिए "नयी संस्कृति" के निर्माण की जरूरत महसूस हुई। इन सुधार आंदोलनों, बहसों, वाद-विवादों और परस्पर विरोधी सरकारों के माध्यम से चीन के "चीनत्व" की मूल्यवत्ता और प्रासंगिकता पर लगातार विचार होता रहा। इस काल में इन बहसों के जरिए कुछ विचारों को मूर्त रूप में ढाला जा सका। राष्ट्रीयता की यह नयी अनुप्राणक अवधारणा और साम्यवाद जैसी विचार

पद्धति इसी प्रक्रिया में उभर कर सामने आये। "विज्ञान और प्रजातंत्र" इस कार्य की सोच पद्धति के आधार बन गये। इस नयी संस्कृति के प्रचार-प्रसार में साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा। अतीत का बहिष्कार एक बारगी या बिना कुछ सोचे समझे नहीं कर दिया गया, बल्कि इसके पीछे बुद्धिजीवियों का विद्वतापूर्ण सार्थक प्रयत्न था। यह सही है कि जन शिक्षा "नयी संस्कृति" का प्रमुख अंग था, पर इसका पूरा जोर बुद्धिजीवी संभ्रांत लोगों पर था। चीनी सांस्कृतिक क्रांति के दौरान नारी मुक्ति, युवा शक्ति, राजनीतिक मुक्ति और सामाजिक उत्थान की बात की गयी। यह बहुतत्ववादी सांस्कृतिक अकादमिक आंदोलन था, जिसने चीन में जड़ जमाए कन्फ्यूशियाई सिद्धांत को जमकर झकझोर दिया।

आधे दशक पहले ताइपिंगों ने कन्फ्यूशियसवाद को चुनौती दी थी। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दिनों में सौ दिनों के सुधारकों ने वास्तविक कन्फ्यूशियसवाद की स्थापना की आड़ में कन्फ्यूशियसवाद के तत्वों पर आघात किया था। प्रथम विश्व युद्ध के बाद मुख्य रूप से जापान और फ्रांस से लौटे विद्यार्थियों ने कन्फ्यूशियसवाद का खंडन करना शुरू किया। धीरे-धीरे यह विचार अपेक्षाकृत विशाल शिक्षित समुदाय में फैला। सब लोगों ने यह स्वीकार कर लिया कि आधुनिकता का स्वागत करने के लिए कन्फ्यूशियसवाद को हटाना जरूरी था। चीन के युवा बुद्धिजीवियों का एक लोकप्रिय नारा था "हम श्रीमान विज्ञान और श्रीमान प्रजातंत्र को चाहते हैं, और श्रीमान कन्फ्यूशियस और उनके दल का बहिष्कार करते हैं।" पहली बार हजार वर्षों से जड़ जमाए इस पुराने सिद्धांत को चुनौती दी गयी और उसे पेकिंग की गलियों में बिखेर दिया गया।

28.7 शब्दावली

मूर्तिभंजक : स्थापित मान्यताओं पर आघात।

भाषा विज्ञान : भाषा के विकास का अध्ययन।

व्यवहारवाद : किसी भी विषय पर व्यावहारिक दृष्टि से सोचना।

रोमानीपन : साहित्य की रोमानी प्रकृति।

28.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) 1) ✓ 2) × 3) × 4) ✓
2) उन्हें आदमी के मातहत के रूप में देखा जाता था। माँ और पत्नी के रूप में ही समाज ने उन्हें मान्यता दी थी। देखिए भाग 28.3

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में विदेशों में पढ़े छात्रों के दृष्टिकोण का उल्लेख होना चाहिए, चीन को आधुनिकीकृत करने वाले विचारों का भी उल्लेख कीजिए, यह भी बताइए कि उन्होंने अपने विचारों को कैसे व्यवहारिक अंजाम दिया। देखिए उपभाग 28.4.2
2) उपभाग 28.4.2 में बताए गये सीयूआन पी के सुधारों का उल्लेख कीजिए।
3) इस नारे में चीन के बुद्धिजीवियों के बीच आधुनिकीकरण के विचार प्रसारित करने की प्रवृत्ति छिपी हुई है। उपभाग 28.4.4 पढ़िए और यह बताने की कोशिश कीजिए कि किसने यह नारा उछाला और परंपरागत कन्फ्यूशियाई व्यवस्था को झकझोरने में इसकी भूमिका का उल्लेख कीजिए।
4) i) ✓ ii) ✕ iii) ✓ iv) ✓

बोध प्रश्न 3

1) भाग 28.5 के आधार पर अपना उत्तर लिखिए।
2) लेनिन के दल संगठन पर विचार और साम्राज्यवादी संबंधी सिद्धांत देखिए। देखें भाग 28.5